16794

❀ श्री सीतारामाभ्यां नमः ❀

सिद्ध अनुभव

सिद्धान्त प्रकाश

—०❀:❀०—

रचयिताः—

श्री १००८ श्रीस्वामी

श्री राजकिशोरीवर शरण जी

(स्वामी परमाँनन्द जी) महराज

—०❀०—

प्रकाशकः—

महाराज किशोरीशरण

प्रथमावृत्ति १०००] सम्वत् २००७ [निछावर ।) मात्र

सत्संग परत्व वर्णन

पच्छ को बिहाय परतत्व को बखान बोजो,
आपनी उपासना को कहै कौन छोटी है।
राम के परत्व सम और को परत्व नाहिं,
करै को अपुष्ट इह बात बड़ी मौटी है।
परमानन्द आपनी सो भाँवना में चित्त राख,
आन प्रभु निन्दा की सुबात बड़ी खोटी है।
राम नाम रट संत भक्तन को संग कर,
सोई सतसंग सब साधन की चोटी है ॥१॥

—:❀:—

कबित्त

चाहै जौन कर्म करै चाहै जौन धर्म करै,
चाहै जौन ज्ञान ध्यान सीकै अति नीक है।
चाहै जौन जप करै चाहै जौन तप करै,
चाहै जौन व्रत करै यज्ञ बिधि ठीक है।
चाहै योगै साधै पंच देव अवराधै,
कौन काटै भव व्याधै पाय सर्व सुख भीक है
"परमानन्द रामभक्ति रहित असिद्ध यैन"
राम मंत्र बिना मुक्ति होवे की न लीक है ॥

—❀—

श्रीसीतारामाभ्यांनमः

॥ सिद्धअनुभव सिद्धान्त प्रकाश ॥

प्रश्न—१ जोप्रभु सबसे परे हैं और सर्व जीवों का सर्वस्व हैं वह कैसे और कब मिलते हैं और वह श्रीप्रभु विराजते कहां हैं जहां हम उनको खोजें ?

उत्तर—

१—देश कालदिशिविदिशहु माहीं। कहहु सो कहां जहां प्रभुनहीं ॥
प्रभु व्यापक सर्वत्र समाना। प्रेमते प्रगटहोंहिं मैं जाना ॥
अस्तुः ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां वह प्रभु न हों, ऐसा कोई भी काल नहीं है जिसमें वह न हों, ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जिसमें वे नहों, अपने स्वरूप से सबमें सर्वत्र विराजमान हैं ॥ १ ॥

२—अस प्रभु हृदय अछत अविकारी।
सकल जीव जग दीन दुखारी ॥
अन्तर्यामी रूपसे सबके हृदय में विराजते हैं। जिसका जैसा स्वभाव बनता रहता है उसी भावानुकूल रसको बढ़ाते हुए उसीके अनुसार फल प्रदान करते रहते हैं। इसलिये पूरी चेष्टा करके लगन रख कर अपने स्वभाव को विलक्षण ऊँचा बदल कर सहज ही अपनी गतिको ऊँचेकी और बनाने का लाभ उठाना चाहिये ॥ २ ॥

३—सेवा रसका नित्य निरंतर अनुभव प्रदान करते हुए श्रीप्रभु नित्य धाममें विराजते हैं इसलिये नित्य सेवामें पहुँचने की लालसा रूपी तलफन का लक्ष्य हर समय

रहना चाहिये अनन्य प्रयोजन होकर उसी एक प्रयोजन की सिद्धिमें जैसे बने तैसे उनमें लगा रहे अर्थात् अपने मन को अपने लक्ष्य परसे डिगने न दे। अपर यहाँ के सारे प्रयोजनों से मन को हटाये रहै ॥ ३ ॥

४—भगवान् सेवकों को साक्षात् सेवा की सुगमता प्रदान करते हुए अर्चा मूर्तिमें ही विराजते हैं क्योंकि आपके ऐश्वर्य्य रूप को तो

मन समेत जेहि जान न बानी।
तर्कि न सकहिं निगम अनुमानी॥

तो फिर यह जीव विचारा कैसे जान सकता है व कैसे अनुमान कर सकता है इसलिये साक्षात् विग्रहवान् मूर्तियों की सेवा, दर्शन, भावना करते हुए शान्त चित्त से प्रेम सहित दीनता पूर्वक एक रस टकटकी लगाकर अर्थात् नेत्रों को प्रभु की छवि पर बाँध कर दर्शन का आनन्द लै लै कर अनुभव किया करै ॥ ४ ॥

५—जीवों का परम कल्याण करते हुए तरन तारन रूप से श्रीआचार्य देव हृदय विमान में विराजते रहना चाहिये। क्योंकि सबसे सुगम सरल उपाय शरणागति आचार्य विग्रह की ही है। शरणागति की क्रिया केवल तन से ही न हो किन्तु मन बुद्धि के तद्गत भाव सहित की जाय। इसमें चलते फिरते, बोलते भगवान की भावना रखते हुए मंगल मूर्ति श्रीआचार्य्य देव का एक एक अक्षर अपना परम कल्याण कारक मान उनके परम स्वच्छ उपदेशों को अतृप्त होकर पान करते हुए उनके अनुसार आचरण करना ही परमश्रेयस्कर जानना ॥ ५ ॥

६—श्रीआचार्य्यदेव की खारी बातें भी (अनभावने उपदेशभी) सुहावनी मीठी अत्यंत लाभदायक लगना। श्रीसदगुरुदेव से भाषण करते समय अपनी वाणी में सहज मधुरता, सरलता, नम्रता, विनय, लाड, आदर, प्रेम झलकता टपकता रहना चाहिये। उनको अपना कहने का दावा तथा हम उनके हैं यह कहने का अधिकार तो तभी सच्चा हो सकता है जब हम उनके स्वभाव में अपना स्वभाव मिलाकर उनकी रुचि में अपनी रुचि मिलाकर वर्तते हुए उनको सब तरह से सन्तोष पहुचाने में। अर्थात् प्रसन्न करने की चेष्टा में चेष्टित रहें, इसीमें सब प्रकार से अनूठा वनों का है ॥ ६ ॥

७—नित्य सेवा प्राप्त करने का उपाय एक मात्र श्रीगुरुदेवके चरणों को माने रहे। अपने प्रेम भरे सेवागुणों से उनके हृदय में कृपा उत्पन्न कर (उमँड़ा कर) उसके बल से बाजी जीतने की चेष्टा में लगा रहे। श्रीगुरुदेव की कृपा से कौनसी सम्पत्ति की चाह बांकी रह सकती है। ऐसा जान अपर सम्पत्तियों की चाहना छोड कर दिव्य सम्पत्तियों को ही प्राप्त करने का उपाय करता रहे। ॥ ७

८—मुख्य सावधानी निजस्वरूप विरोधी चेष्टाओं से अपने को बचाये रखने की ही कोशिश में तत्पर रहे। जो विरोधी रास्ताओं से बचता हुवा अपने स्वामी की थोड़ी सी भी सेवा करता है उसको वे परम दयालु स्वामी अनेक सेवा गुणों से अधिक मानते हैं और किंचित् निश्छल सेवा से कृपा कर द्रवी भूत होते हैं नहीं तो फिर अधिक सेवा को भी स्वरूप विरोधियों के सहित थोड़ी ही मानते हैं तथा

उनको उससे संतोष तनक भी नहीं होता है क्योंकि उनको वह अपना शरणागत भूलके रास्ते पर चलता हुवा ठगाताहुआ दीखता है। सद्गुरु के द्वारा इशारे किये गये मोक्ष विरोधी स्वार्थ कारियों से तथा काम, क्रोधादिगढ्ढों से बचबच कर पैर रखते हुये नित्य सेवा की प्राप्ति के पथ पर चलने में लगना हम से बनने लायक काम है। आगे को बढ़ाने कीकृपा प्रभुकरते हैं। इस तरह ऊँची दशाओं को प्राप्तकर श्रीगुरचरणाश्रय से पार अर्थात् ठिकाने लग जाते हैं। ॥ ८ ॥

९—हम में क्या २ करने की योग्यता और कहांसे कहां तक पहुँच ने की योग्यता भरी पड़ी है उसको सद्गुरु के विना अपने आप जान लेने की योग्यता ढकी रहती है किन्तु परम कृपालु श्री गुरदेव जब उसका बोध करा देते हैं तो फिर किस वात के फेर में भूल हम उस योग्यता से काम न लेंगे। जहां तक की योग्यता है उस दशा तक पहुचने पर सारी सम्हाल का भार फिर श्री प्रभु स्वयं ही ले लेते हैं।

श्री मद्भगवद् गीतायां:—

अनन्या श्चिन्तयन्तो मां येजनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभि युक्तानां योग क्षेमं वहाम्यहम् ॥ ९।२२॥
ये यथा मां प्रपद्यन्ते सांस्थैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थसर्वशः ॥ ४।११॥

॥ ९ ॥

१०—सद्गुर वचन द्वारा दिखाते हुए विरोधियों से बचकर चल ने वाले का पैर फिसल कर उलटा नहीं पड़ता किंतु आगे ही बढ़ता जाता है श्रीगुरु कृपा से अनन्यचिंतन दशा में पहुँच जाता है।

मातु पिता प्रभु गुरु शिखपाले।
चलेहुँ कुमग मग परहिं न खाले ॥

११-कार्यतो सब बना बनाया धरा है केवल सद्गुरु वचनों पर गौरव बिचार करके कोई बहाना न बनाकर कोई अड़चन न लगाकर न समझ कर अपनी कोई सयानपता न लगाकर इसके अनुसार चलने की देरी की कसर से हीन बिगड़ी दशा में पड़ा रहता है और कर्म, धर्म, शक्ति हीन सा दिखाई देता है, अपनी संकुचित बुद्धि के अनुसार जिस स्वार्थ में हम अपनी भलाई बुराई माने वैठे हैं उसको तो छोड़ने पकड़ने में कुछ जोर पड़ता नही दीखता और न कोई झंझट नजर आंती है झट अपने आप सहज रूप से होता रहता है किंतु असली स्वार्थ क्या है इसकी बुद्धि श्रीगुरुदेव द्वारा यथार्थ तत्त्व प्राप्त होने पर अपनी योग्यता जो नकली स्वार्थ में लगा रक्खी है उसी को असली स्वार्थ में शीघ्र क्यों न लगा दें जिस स्वार्थ को हम अच्छा समझे वैठे हैं उसको श्रीगुरुदेव यदि खोटा बतावें तो उस स्वार्थ से झट मनको मोडलेना चाहिये।
स्वारथ साँच जीव कह येहा, मन क्रम बचन रामपद नेहा ॥

१२-अपने भीतर ही भीतर यह टटोलते रहना चाहिये कि कहीं हमारी भूलमें तो नहीं कोई भाव चल रहा है कही मैंने उल्टे रस्ते को तो नहीं सीधामान लिया है इसको भी श्रीगुरुदेव से सुरझाते रहना चाहिये और उनकी बताई हुई रास्ता को ही ठीक माने रहना चाहिये अपनी अयोग्य बुद्धिको (छोटी सी बाल बुद्धि को) उसमें लगाकर भ्रम में न पड़ा रहना चाहिये।

१३-अनुभव सम्पन गुरुदेव की बताई हुई राहको अपना कर अपनपौको दूर कर अपनी सूझको अलग किनारे रखकर

उसीके अनुसार वर्तै। छेड कारक कोई शब्द नहीं रक्खे जिसे गुरुदेव अनर्गल (वेठीक) बतलावें वही अटकाव (रोक) है जो ठीक बतावें वही ठीक निधड़क सड़क (साफ रास्ता) है। अपने तरफ की ठीक वे ठीक कुछ न रक्खै जिसको वे जैसी बतावैं उसको वे वैसी की वैसी मानें अर्थात् उनके बताये हुएमें यह बात ऐसी ही है यह निश्चय रूप से जाने यदि अपनी समझमें नहीं आरही है तो उसमें अपनी ही भूल जानेकि हमारी ही समझ की कसर है।

१४–श्रीगुरुदेव की आज्ञा पालन करना ही मोक्ष का साधन है. शिष्य धर्म पालन करने वाले पर भगवान् विशेश रीझ कर नित्यसेवा उसकी करते हैं तथा उसे बड़ाई देते हैं भला कहिये तो उस दरबार की बड़ाई के सामने यहाँ के तुच्छ मान अपमान पर क्या नजर दौड़ सकती है।

१५–इस प्रकार के सच्चे शरणागत धर्मका पालन करनेवाला सुन्दर शिष्य सहज में उसी दशाओं को प्राप्त करता हुवा श्रीगुरु कृपा से नित्य सेवा का अधिकारी बन कर शीघ्र नित्य धामको अलंकृत करता है

१६–श्रीप्रभु क्या करते हैं ?

करें करावैं आपही नाम न अपना लेंय।
साँई हाथ बड़ाइयाँ जेहिं भावेंतिहिदेंय ॥

हे प्यारे जनो, सब कुछ वेही करते हैं अर्थात् जो कुछ होता हवाता है सब उन्हीं के आश्रयसे [सहारे से सत्ता से] होता है सब क्रियाओं की पूर्ति उन्हीं प्रभुके द्वारा होती है सब प्रकार की सफलता उन्हीं की कृपा से मिलती

है। जीव के परम कल्याण के लिये वे क्या नहीं करते। परम दयालु प्रभु अनन्त जीवों को अनन्त प्रकार के उपाय रचकर जीवों का उद्धार कर सकने की योग्यता देते है।

१७– कबहुक कर करुणा नर देहीं।
देत ईश विन हेतु सनेही।।

बिना कारण कलेवर का निष्क्रिय जीव को जिस अवस्था से वह कभी भी नित्य सेवा सुख को प्राप्त नहीं हो सकता ऐसी अवस्था से निकाल कर प्रकृति के साथ संयोग द्वारा अकारण देव दुर्लभ कलेवर प्रदान करके अपनी प्राप्ति के योग्यता की अवस्था में स्थित करने की निर्हेतु की कृपा करते हैं इसलिए जिस काम के लिए उस दयासागर ने यह सामग्रियाँ दी हैं उसका लक्ष्य एक क्षण भी न भूलना चाहिए। केवल नित्य सेवा प्राप्ति के भावों में लगाने के लिये ही है। इन औजारों को किसी दूसरे भाव में न बेंच डाले। प्रकृति के संग दोष से सावधान सचेत रहने के लिये शास्त्र दीपक हैं।

१८–इतना ही नहीं अवतार धारण करके स्वयं प्रभु पधार कर श्रीमुख से उपदेशामृत का प्रचार करते हैं और ऐश्वर्य माधुर्यादि अनन्त गुणों को तथा स्वभाव को प्रगट करते हुए अपने निज भक्तों के साथ उनके अनुकूल भावों को धारण करके जैसै साथ तैसे बन कर प्रेम खेल खेलते हैं उनको तन्मयता पूर्वक गाय गाय कर कलियुग के लिये साधनरूपी नौकाएँ छोड़ देते हैं इसी लिये भक्त जीव उन प्रभुके स्वभाव को व कल्याण मयी गुणों का स्मरण करके गद्गद् होता हुआ तन्मयता सहित प्रभु की लीलाओं

का ध्यान, अनुसंधान श्रवण कीर्त्तन पाठ करते हुए सहज ही में उन प्रभु को समीप में बुला लेते है और प्रभु मिलन रूपी ऊँची दशा को प्राप्त कर लेते हैं॥

इति शुभम्

समाप्त

श्रीजानकी बल्लभाय नमः
श्रीहनुमताय नमः
श्रीगुरु बनमः
श्री चारु शीलायै नमः

जैरघुनंदन जनक किसोरी। जय सिया राम मनोहर जोरी॥

दोहा

जै श्री रघुनंदन गुरू, भव भय नासन हार।
शकल अमंगल जर दलन, जनक सुतहि जिय धार॥

सोरठा

सिय रघुबर मन हार, अवतारी अवतार मणि।
प्रभुसुख रासि उदार, गुणनिधाँन करुणा भवँन॥

भजन धुन ताल

माई मैंतौ जुगल भाव धन पायौ
शिव भुशुंड हनुमंत अगस्तहि, जेहि प्रभाव समझायौ।
जुगल नाम गुन ध्यान धामरति, जुगल प्रमोद सुहायौ॥
जुगल विहार निहार जुगलछबि, जुगल कृपा बल भायौं।
रंग महल रव रंग रस बर षत, सर सत जिय हर षायौ॥
सेवा सौंज सम्हाँर शकल बिधि, नितनव सुख उमगायौ।
जुगल माधुरी निरखि हमेसाँ आमय सुख बिसरायौ॥
धन्य गुरू जिन्ह सरण दीन्ह मुहि, स्वाँमिनि स्वाँमि लखायौ।
आसा त्रास बिनास खासपथ, परमहिती दरसायौ॥
राज किशोरी बर शरणा गत, रस किंन पथहि दृढ़ायो।

दोहा

जीव रंकु प्रमुदित भयो, जुगल मंत्र निधि पाय।
बारबार गुरु इष्ठ के, मन बच क्रम बलि जाय ॥ ४ ॥
हेमन सीते स्वाँमिनी, प्रणित पाल भज चेत।
राम बल्लभा हेत बिनु, अति अभिष्ट बरदेत ॥

राग गौरी ताल

जै जै जै श्रीरघुबर प्यारी
अतिसय परम कृपालुनि स्वाँमिनि, जानकी जीवनजान हमारी।
सनु मुख निरखि कृतध्नीपतितन, करहि कृपा बलिहारी ॥
सिय जूके संग रहूँ न तजू छित, सेवा सौंज सभाँरी।
निमिकुल दीप मणी सुकुमारी, रघुकुल मणि उजयारी ॥
सरणा गति प्रतिपाल परिकरन, रीझन द्रबन अपारी।
निज समबिभव बिलाशसखिनकौं, दैंन महाँ सुखकारी ॥
निज भरोस दृढ़तोष कृपा बल, मन बच कर्म बिचारी।
कृपाशील निज जांन सम्हारो, श्रीरधुबंश दुलारी ॥

दादरा भजन ताल

अवधलाल शिर भूत लगोरी
दिन नहि चैंन न रैंन नीद कहुँ, अंग अंग सब जात दगोरी।
कौंन उपाय करौं मेरी सजनी, छिनु नहि त्यागो जाय सगोरी ॥
नैनन श्रवन समाँन्यौ रसना, शकल अंग रति रस उमगोरी।
गुरू जन लाज प्रकाशत्रास अति, कछुनरही जियपिय जमगोरी ॥

चलहु बेग सखि फूल बाटिका, सुन्दर श्याम द्रगन भरिगोरी।
कृपाशील स्वाँमिनी सियाकौ, पियाचित्त हर छल चल गोरी॥

गजल ताल हक्कानी

हे पिया तुम से बिलग छिन भर रहा जाता नहीं,
क्या करै कैसे रहैं कोइ यत्न दिखलाता नहीं।
जी पिया प्यारे हमारे जांनकी जीबन सुनो,
सिया जीहारे जियासे बिलगना भाता नहीं।
कोइ भुलाबा दैके हम को न अलग हौंना पिया,
जो कुछ हौंना सगलियै जीकम, मेरा नाता नहीं।
अपना कर नहि त्यागये येतौ तिहारे हाथ है,
अय पिया दिल में समुझु लीजे लिषा षाता नहीं।
गुण कृपाशीला सिया जीला कृपा चहती सदाँ,
को प्रिया प्यारे परस पर सत्य सुख चाता नहीं।

(खेमटा)

चितवत ही कर दींना जुलंमरे,
छींन लींन कुल काँन छिनक मैं, तिरछी नजर हँसि कींना जुलँमरे
जानकी वल्लभ प्यारे अधारे, अवध दुलारे प्रबीनां बलँम रे॥
भ्रकुटि कमांन तांन द्दग सरसखि, दींन हृदय बिचचींना सितँम रे।
कृपाशील घायल जखमिनि भइ, धीर बिवेक थमीना मलँम रे॥

दोहा

हे प्यारी प्रीतम मेरे, सिय रघुनदन प्राण।

कृपाशील तव नाम पर, भइ सियपिय कुरबाँन ॥
सियापिय प्रणित सम्हारिहै, फिकर न आनी मोय।
बनयावै प्रीतमैं रुची, शुचि सुष मय जिय जोय॥

सवैया

प्रेंम की चोट लगी जेहि की, तेहि प्रेंमी कि सो गतहो चुकीरी।
उस सीता पिया से सुनेह किया, यह देह सनेह वो खोचुकीरी॥
निज कर्म कीटेक कोमटै अली, अब होनै रही सो तौ होचुकीरी।
गुनौ का है भटू पछिताय बृथा, जोइ भायौ मनै सोइ जोचुकीरी

दोहा

कृपाशील सियाराम सौं, करसु प्रीति दिल खोल।
बिषय भोग निंद्रा हँसी, जगरत नहि बहु बोल॥

भजन

लगन आय क्या लग न दिखावे।
जो चाहे कर डाले छिनक में
सूरति मूरति एक मिलावे॥
मित्थ्या जग सुख छोड़ भरम सब
संसय रहित दिब्य सुखपावे॥
रह ये कांत असंग व्रती धर
मान प्रतिष्ठा दूर बहावे॥
नाम स्वरुप धाम लीला बिच
निश्चय एक तत्व मनलावे॥

परमाँनंद रति पाय समीपी
सोइ प्रीतम परमेश रिझावे ॥

॥ दोहा ॥

तन बल धन बल बुद्धि बल, यश यैश्वर्य प्रताप
हरि बल बिन शोभित नहीं, निजकरतूति प्रलाप ॥

भजन

लगन निगोड़ी के पालेपरी री ॥
दिन नहि चैंन रैन नहि निदिया
नख सिखते प्रिय दरद भरी री ॥
दरद की बातन बूझे दरदी
दर बिन दर दर जात दरी री ॥
दारुन दाह दगी दिल अंदर
कोटि कलप सी बीत घरी री
जब मिलिहैं दिल दार मिलापी
पूरे जनम की आस खरी री ॥
कृपा शील टोना सो भयो मोहिं
दरस बिना नहि दसा हरी री ॥

16795

लगन निगोडी क्यान करावै ॥ १ ॥
घर पर वार छुडाय संग सब—रूपरंग वेढंग बनावै ॥ २ ॥
आसू बिना रुवावे निसदिन—बिना हँसीकी हँसीहसावै ॥ ६ ॥
पिया वेदरदी दरदन लावै—दरद भरी केहि दरद दिखावै ॥ ४ ॥

दरद अधार दरद युत मुद मय–बेदरदिनको दरद न आवै ॥ ५ ॥
परमाँनंद दरद धन हमरे–बिना दरद दिल लगन न पावै ॥ ६ ॥

भजन

हे प्रभू मेरे हृदय बस फिर कहीं जाना न हो।
रात दिन देखू छबी कोई वक्त छिप जाना न हो ॥
लुब्ध तेरे पद कमल का मधुप मन मेरा रहै।
तेरी आशा प्यास बस दर दर मैं भ्रम खाना न हो ॥
ये जगत मारीचिका सुख तन वतन धन वाम से।
नित बिलग रखना मुझे जो पीछे पछताना न हो ॥
प्रेम भक्ती बोध अविचल देके हर पाखंड सब।
काम मोहादिक को गहि के दिल ये दीवाना न हो ॥
लब, घरी, पल, छिन, न भूलै यादगी तेरी प्रभू।
गति तेरी गहकर कभी आखिर को लजियाना न हो ॥
बिन कृपा तेरी प्रभू माया से दुस्तर छूटना।
बल तुम्हारा धार दिल फिर कोई का भय खाना न हो ॥
जीवत का संसार संगी है वह अपने स्वार्थ का।
गर्ज बिन कुछ भी न मतलब यों तो हैवाना न हो ॥
जो मुझे इन्सांन का चोला सुकर दाया दिया।
तो अब तेरी चाह चित को और की लाना न हो ॥
परमा नँद मन बच करम तेरे ही में उरझा रहै।
कहीं जन्म कर्म वश पर तुमको बिल गाना न हो ॥

भजन

हाथ में होगा कभी मन हाथ में माला जो है।
क्यों न घूमें चित्त ब्रती माला घुमा डाला जो है॥
दिल व बाणी कर्म भी इक भाव होवैगा कभी।
प्रेम भगवत देयगा माथे को रंग डाला जो है॥
भाइयों झूठे हो साँचे कोई विधि प्रभु में लगो।
मन कभी रंग जायगा कपड़ा रंगा डाला जो है॥
जन्मते हरिकीकृपाबिन, किसकीदिलप्रभुमें लगा।
झूठा ढंग साचा करे रंग दीनों का प्याला जो है॥
परमनँद पाकर मनुज तन कोई विधि प्रभु को सुमरि।
स्वान, खर, कूकर, की चालैं तज सुपथ चाला जो है॥

भजन

वही नर बीर इस जगमें जो अपना निज धरम पाले।
हजारों दुख विपति सिर पर सहे पर धीर धर चाले॥
सदा सीधा अछल अघविन रहे हरि चरण शर्णों में।
सजा तन मार्ग जिहि प्यारा न सत ईमान से हालै॥
बनै जैसे गुजर अपनी करै नित सावधानी से।
न घबड़ावै न कुछ सोचै त्याग बिष सम विषय ख्यालै॥
संत सत संग प्रभु गुण गण दृग पुलके सुन सुश्रवनों से।
कुसंगति जाल साजी के न जावै पास तज जालैं॥
सुपरमानंद सतयुग की चले दिल धार पथ दिल से।
न हरगिज हार खानेका करै निज बसमें कलि कालै॥

॥ दोहा ॥

स्वामी सीताराम जिहिं कमी कहहु तिहिं काह।
सब जन प्रीति कृपा करहिं निर्छल नेह निवाह॥
जन्म जन्म छिन छिन यही कृपा आपकी चाह।
सिया श्याम पद कंज महँ निर्छल प्रेम निवाह॥
युगल स्वामि की लगन मैं लागत तनहू भार।
पुनि का बिभव विलास सुख त्रैगुण जनित विकार॥

कबिता

काहू कि न संक दिन रैंन नाम रटनां जहाँ।
करिहे का कोऊ कोन प्रभु ा जब्बर है॥
एक बिश्वास आस त्रास बल हृदय मांझ।
दूजो न ग्रेइ देह नेह को खबर हैं॥
परमाँनंद कोउ भले भलो बुरो कहे जाव।
प्रभु को बिना देखे नही तन को सब्र है।
नजर उठाय ताकी ओर को निहारैं नेंक।
जापै सियराम सरकार की नजर है॥

समाप्त

गाया कर

नवल सुकुञ्ज बीच नवल नित साज सांज,
नवल हिंडोला बीच प्रिय को झुलाया कर ।।
नवल नवेलिन सँग नवल शृंगार युक्त,
नवल रहस्य केलि नवरस बताया कर ।।
'परमानन्द' नवल नवेली नित्य देख-देख,
नवनव आँनन्दन में तूतौ समाया कर ।।
नवल रंग भरे नित्त.नवल प्राण प्यारे के,
नवल हुलास युक्त नवल गुण गाया कर ।।

—❀०❀—

कवित्त

येक रस, येकभाव येक रूप येक टेक,
येक नेम येक प्रेम, येक सुचि, धाम हैं ।।
येक व्रति, येक रति येक मति, येक गति,
येक ज्ञांन, येक ध्यान, येक बाँन श्याम हैं ।।
येक सेव, येक देव, येक नेव, येक भेव,
येक येक सब पै अनेक गुण ग्राम हैं ।।
द्विभुज अखंड सदाँ अवध में विराज मान,
परमानन्द ध्यावै सोई सीताराम नाम हैं ।।

—:०❀०:—

नये अक्षरों द्वारा
सुन्दर छपाई के लिये

श्री रामायण प्रेस लि०

को याद रखिये ।

सेठ बन्शीधर लड़ीवाले द्वारा:—

श्री रामायण प्रेस लिमिटेड

श्री अयोध्या जी में मुद्रित ।

प्राप्ति स्थान:—

रहस्य प्रमोद भवन

जयपुर मन्दिर जानकी घाट
श्री अयोध्या जी ।